☆ स्वतंत्र भारत के 'अंग्रेज' प्रधानमंत्री : जवाहर लाल नेहरू

दया प्रकाश सिन्हा
आई. ए. एस. (सेवानिवृत्त)

आजाद भारत के प्रथम प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू ने अपने हृदय की गहराइयों में पलने वाले रहस्य को एक अन्तरंग और दुर्बल क्षण में तत्कालीन अमरीकी राजदूत गॅलब्रेथ के सामने उजागर करते हुए कहा– ***'आप जानते हैं, मैं इस देश में हुकूमत करने वाला आखिरी अंग्रेज हूँ।' (जे.के. गॅलब्रेथ 'ए लाइफ इन अवर टाइम्स : मेमोयर' बॉस्टन 1981, पृष्ठ 408)***

सहसा इस पर विश्वास नहीं होता। क्या यह संभव है कि आजाद भारत का प्रधानमंत्री अपने आपको 'अंग्रेज' कहे, और यह कहने में गर्व अनुभव करे। वही व्यक्ति जिसने अंग्रेजों के विरुद्ध स्वतंत्रता संग्राम में भाग लिया था, जो जेल गया था, वह ऐसी बात कैसे कह सकता है? इस विरोधाभास को कैसे सुलझाया जा सकता है?

किसी भी व्यक्ति के विकास की धाराओं की दिशा किशोरावस्था में ही निश्चित हो जाती है ; और वह आजीवन उसी दिशा में बढ़ता रहता है। उदाहरण के लिए पाकिस्तान के पूर्व प्रधानमंत्री जुल्फिकार अली भुट्टो की हिन्दू–विरोधी मानसिकता का निर्माण उनकी किशोरावस्था में ही हो गया था; उन्होंने 17 वर्ष की अवस्था में 26 अप्रैल, 1945 को मोहम्मद अली जिन्ना को खत में लिखा था :–

'मुसलमानों को यह जानना चाहिए कि हिन्दू कभी हमारे साथ नहीं हो सकते और न होंगे। वे कुरान और हमारे पैगम्बर के सबसे ज्यादा खतरनाक दुश्मन हैं।' (स्टेनली वोलपर्ट; जुल्फी भुट्टो ऑफ पाकिस्तान : आकफॉर्ड, 1993 पृष्ठ 24–25)

किशोरावस्था के इन संस्कारों के परिणामस्वरूप ही उनका शेष जीवन प्रचण्ड हिन्दू विरोध की एक सतत दास्तान बनकर रह गया।

जवाहर लाल नेहरू ने भी किशोरावस्था में अपने पिता मोती लाल नेहरू को इंग्लैण्ड से पत्र लिखा था :–

"हिन्दुस्तानियों को एक दिन खुद हुकूमत मिलेगी, लेकिन यह तमाम जमानों के बाद ही मुमकिन है। इसका मतलब है कि इसमें कई लाख बरस लग सकते हैं.... । इसमें खास दिक्कत तालीम की कमी है; और कई करोड़ पीढ़ियों के बाद ही हिन्दुस्तानियों को अंग्रेजों के दर्जे तक लाया जा सकता है।'

इस पत्र से स्पष्ट है कि किशोर जवाहर लाल के मन में अंग्रेजों की श्रेष्ठता का ऐसा सिक्का बैठ गया कि वह पूरी जिन्दगी अंग्रेजों और अंग्रेजियत के प्रति हीन–भावना से ग्रसित रहे; इस हीन भावना से ही प्रेरित होकर उन्होंने अंग्रेज और अंग्रेजियत को ओढ़ने और नकल करने की लगातार कोशिश की और अपने आपको अंग्रेज कहने में गर्व अनुभव किया।

सन् 1922 के अपने मुकदमे में स्वयं जवाहर लाल नेहरू ने अपने बयान में कहा –

''इंग्लैण्ड में काफी लम्बे अरसे तक रहने के बाद, करीब दस बरस पहले मैं वापस लौटा।..... मैंने वहां 'हैरो और कैम्ब्रिज' की तकरीबन सभी पूर्वाग्रहों को अपने में समों लिया था। अपनी पसन्द और नापसन्दगी में मैं शायद अंग्रेज ज्यादा और हिन्दुस्थानी कम था। मैं दुनिया को एक अंग्रेज की नजर से देखता था..... मैं इंग्लैण्ड और इंगलिश का इतना तरफदार था, जितना एक हिन्दुस्तानी के लिए मुमकिन हो सकता था।''

भारत के स्वतंत्रता संघर्ष के दौरान जवाहर लाल की पोशाक बदल गई लेकिन दिल नहीं बदला। पहले–पहले प्यार जैसा अंग्रेजी का भूत हमेशा उनके दिल और दिमाग में छिपा रहा और जैसे ही मौका मिलता वह बाहर निकल आता। सन् 1946 में जब वह भारत की अन्तरिम सरकार के प्रधानमंत्री के रूप में इंग्लैण्ड गए, तो दिल्ली में हवाई जहाज पर चढ़ते समय वह शेरवानी, चूड़ीदार पाजामा तथा गांधी टोपी पहने थे। लेकिन लन्दन के हवाई अड्डे पर जब वह जहाज से उतरे, बाकायदा सूट और हैट से लैस थे। उनके हाथ में सिगार था। यात्रा के दौरान ही उनका कायाकल्प हो गया। इंग्लैण्ड पहुंचते पहुंचते वह अंग्रेज बन चुके थे। बाद में जब हिन्दुस्तानी अखबारों ने इसकी आलोचना की, तो बेचारे को मजबूरन पश्चिमी वेश–भूषा से इंग्लैण्ड में भी वंचित रहना पड़ा।

कहावत है–चोर चोरी से जाए, हेरा–फेरी से नहीं जाता। जवाहर लाल ने अंग्रेजी पोशाक का तो त्याग कर दिया, लेकिन अंग्रेजियत, जो उनके व्यक्तित्व के पोर–पोर में बस गई थी, का त्याग नहीं कर सके। उन्होंने हमेशा ही दुनिया को अंग्रेजी चश्मे से देखा। बी. आर. नन्दा के शब्दों में – ***''उन्होंने भारतीय संविधान सभा में ब्रिटिश नमूने पर संसदीय प्रजातंत्र के पक्ष में दबाव डाला और प्रधानमंत्री के रूप में उन्होंने ब्रिटेन में स्थापित परम्पराओं के अनुरूप राज्य के अध्यक्ष पद की मर्यादा, कार्यपालिका और विधायिका के अन्तर्सम्बन्ध, केबिनेट प्रणाली, राजनीतिक नेतृत्व और नौकरशाही के सम्बंधों आदि पर भारतीय परम्पराएं विकसित करने का प्रयत्न किया।''***

जब सैकडों साल की दासता के बाद कोई देश आजाद होता है, तो आजादी के बाद बनने वाली सरकार में एक क्रांतिकारी जोश होता है। वह गुलाम देश की सरकार से एकदम अलग अपनी नई क्रान्तिकारी छवि बनाती है। किन्तु जवाहर लाल ने आजाद भारत को पहली

सरकार को क्रान्तिकारी सरकार न मानते हुए, अंग्रेज सरकार की उत्तराधिकारी सरकार माना और अंग्रेज सरकार की नीतियों को ही आगे भी चलाया।

अंग्रेजी हुकूमत की हिन्दू विरोधी नीति भी नेहरू सरकार ने विरासत में पाई थी और उसे आगे बढ़ाया। अगस्त 1947 में संविधान सभा के अध्यक्ष डा. राजेन्द्र प्रसाद ने उनको एक पत्र में लिखा कि – गोवध के विरुद्ध हिन्दू–भावना है। यह भावना इतनी तीव्र है कि इसकी उपेक्षा करना सम्भव नहीं है। नेहरू ने उसी दिन अपना उत्तर देते हुए लिखा कि– यह सही है कि गोवध के विरुद्ध अधिकांश हिन्दू–जन की भावना है, किन्तु वह इसके आगे झुकने के बजाए प्रधानमंत्री पद से त्यागपत्र देना ज्यादा पसन्द करेंगे।

उनका हिन्दू–विरोध 12 अक्टूबर, 1933 के आसफ अली को लिखे पत्र में खुलकर झलकता है :–

"मैं हरिजन काम से जरा भी मुतासिर नहीं हूँ...सच तो यह है कि मुझे हरिजन आन्दोलन का यह पहलू बहुत अच्छा लगता है कि यह हिन्दू समाज को कमजोर कर देगा और उसको टुकडों में बाट देगा।"

अपनी हिन्दू पहचान भी नकारी

हिन्दू समाज को कमजोर करने और उसके टुकडों में बंटने पर प्रसन्न होने वाला व्यक्ति स्वयं हिन्दू नहीं हो सकता। अपनी हिन्दू पहचान को नकारते हुए उन्होंने एक बार स्वयं घोषित किया था कि वह तालीम से अंग्रेज, ख्यालों से अंतरराष्ट्रीय, तहजीब से मुसलमान और पैदाइश के इत्तफाक से हिन्दू हैं। यह सिर्फ एक इत्तफाक था कि वह हिन्दू माँ–बाप के यहाँ पैदा हो गए, वर्ना उनका हिन्दुओं से कोई लेना–देना नहीं था। यह अलग बात है कि हिन्दू बहुल–देश में प्रधानमंत्री बने रहने के लिए उन्हें अपने नाम के साथ 'पंडित' चिपकाए रखना पड़ा, जैसे– उनके सर पर गांधी टोपी चिपकी रहती थी। यह वैसी ही मजबूरी थी जिसके अन्तर्गत उनको भारत के संविधान के निदेशक तत्वों में गोवध बन्द करने के निर्देश को स्वीकार करना पड़ा। किन्तु मन से उन्होंने इसे कभी स्वीकार नहीं किया। इसलिए 18 वर्षों के अपने प्रधानमंत्रित्व काल में उन्होंने संविधान के इस निर्देश का पालन नहीं किया।

अब दो प्रश्न उठते हैं। पहला – यदि जवाहर लाल में इतनी अंग्रेजियत थी, तो उन्होंने अंग्रेजों के विरुद्ध स्वतन्त्रता संघर्ष में भाग क्यों लिया? दूसरा– वह इतने अंग्रेजियत भक्त कैसे हो गए कि अपने आपको अंग्रेज कहने में गर्वित अनुभव करने लगे ?

जवाहर लाल एक महत्वाकांक्षी पिता मोती लाल नेहरू के एक अति महत्वाकांक्षी पुत्र थे। उन्होंने आजाद भारत के प्रधानमंत्री का सपना देखा था और उसे सच करने के लिए वह अंग्रेजों के विरुद्ध खड़े हुए, जेल भी गए, लेकिन इस सबके बावजूद अंग्रेजियत के प्रति उनके

तन–मन में जो सम्मान और स्तुत्य–भाव था, वह कम नहीं हुआ। नेहरू जी के व्यक्तित्व के विश्लेषण से स्पष्ट है कि उनके लिए अंग्रेजों के विरुद्ध संघर्ष करते हुए अंग्रेजियत की भक्ति करने में कोई विरोधाभास नहीं था।

जहां तक दूसरे प्रश्न का सबंध है, इसके लिए पीछे जाना होगा; बहुत पीछे। 19वीं शताब्दी के प्रारंभिक वर्षों में जब ईस्ट इंडिया कम्पनी में शिक्षा–नीति पर विवाद चल रहा था, कुछ अधिकारियों का मत था कि कम्पनी को भारतीयों की संस्कृत, अरबी, फारसी आदि की शिक्षा के लिए पाठशालाएं–मदरसे खोलने चाहिए, जबकि पब्लिक इंस्ट्रक्शन्स कमेटी के अध्यक्ष लॉर्ड मैकॉले का प्रस्ताव था कि भारतीयों को पाश्चात्य ढंग से स्कूलों में अंग्रेजी माध्यम से शिक्षा दी जानी चहिए। मैकाले ने अपने इस प्रस्ताव के औचित्य में सन् 1935 में लिखा–

'इस समय हम लोगों को ऐसे वर्ग के निर्माण के लिए सर्वाधिक प्रयत्न करना चाहिए जो हम लोगों और उन लाखों–करोडों लोगों के बीच, जिन पर हम शासन करते हैं, एक कड़ी, एक दुभाषिये के रूप में कार्य करें – एक ऐसे लोगों का वर्ग जो रक्त और रंग में भारतीय हो, किन्तु पसन्दगी में अपने विचारों में, अपनी नैतिकता में और बुद्धि में वह अंग्रेज हो।'

ईस्ट इंडिया कम्पनी ने मैकाले के प्रस्ताव के अनुसार ही अंग्रेजी शिक्षा का भारत में श्रीगणेश किया। और 100 वर्षों के भीतर ही देश ऐसे ***'काले अंग्रेजों'*** से भर गया, जो मात्र 'रक्त और रंग' में हिन्दुस्तानी थे; जिनमें 'रक्त और रंग' के अतिरिक्त कुछ भी हिन्दुस्तानी नहीं बचा था। जवाहर लाल नेहरू भी ऐसे ही एक ***'काले अंग्रेज'*** थे। इसीलिए वह अपने को अंग्रेज कहने में गर्व महसूस करते थे।

बी–255, सेक्टर–26,
नोएडा–201301
दूरभाष : 95120–2524911
dpsinha50@hotmail.com